International Journal of Sociology and Political Science
www.sociologyjournal.in
Online ISSN: 2664-7745, Print ISSN: 2664-7737
Received: 15-04-2025, Accepted: 16-05-2025, Published: 31-05-2025
Volume 7, Issue 2, 2025, Page No. 88-92

स्वतंत्रता में स्वदेशी की भूमिका: गांधीवादी दृष्टिकोण

राजदीप चतुर्वेदी
शोधार्थी, राजनीति विज्ञान विभाग, महाराजा छत्रसाल बुंदेलखंड विश्वविद्यालय छतरपुर, मध्य प्रदेश, भारत

सारांश
गाँधी दर्शन का मूल आधार अहिंसा पर आधारित सामाजिक एवं राजनीतिक व्यवस्था का निर्माण करना, जिसमें नागरिकों व राज्य के मध्य उत्तरदायित्वपूर्ण संबंध हो, यही उत्तरदायी संबंध ही स्वराज का मार्ग प्रशस्त करेंगे, गाँधी दर्शन में स्वराज केवल राजनीतिक एवं प्रशासनिक अवधारणा नहीं है, अपितु सामाजिक कुरुतियों का उन्मूलन कर शोषणविहीन आत्मनिर्भर सामाजिक–आर्थिक संस्चना का निर्माण करना ही स्वराज है। गाँधीजी का स्वराज आत्मनिर्भर व्यक्तियों का समुच्चय है, जिसमें प्रत्येक व्यक्ति श्रम करके अपनी आजीविका प्राप्त करता है, इसके लिए गाँधीजी कुटीर उद्योगों की स्थापना पर बल देते हैं और स्वदेशी को स्थापित करते हैं।[1] स्वराज की भावना उत्पन्न करने में स्वदेशी राज्यवस्था अर्थात स्वदेशी ग्रामीण अर्थव्यवस्था यथा खादी उद्योग, कुटीर उद्योग, हस्तशिल्प, समतामूलक समाज की स्थापना, स्त्रियों के कल्याण, पर्यावरण संरक्षण, सांस्कृतिक एवं स्वेदशी नैतिक मूल्यों की भूमिका अहम है। अर्थात स्वदेशी का तात्पर्य सिर्फ देश की सीमाओं में बनी सामाग्रियों के प्रयोग से ही नहीं बल्कि सांस्कृतिक परंपराओं व मूल्यों का अनुसरण करते हुए नवीन जीवन मूल्यों को विकसित करते हुए आत्मनियंत्रित समाज का निर्माण करें, जिस्से स्वराज के वास्तविक मर्म को आत्मसात कर सकें ।

मूलशब्द: स्वदेशी, स्वराज, आत्मनिर्भर, ग्राम स्वराज

प्रस्तावना

प्रत्येक समाज व राष्ट्र का उद्देश्य एक महान सभ्यता के रूप में परिणत होने को होता है, इसके लिए समाज या राष्ट्र एक लंबा समय लेता है, उस दौरान समाज अपने सांस्कृतिक मूल्यों, कला, अर्थव्यवस्था, राजव्यवस्था, पर्यावरण, समाजिक अंतः क्रिया, प्रशासनिक व्यवस्था के सिद्धांतों को गढ़ता है, जिसके परिणामस्वरूप अभीष्ट सिद्धांतों का निर्माण होता है, जिसे ''स्व '' कहते हैं, इसी स्व के अनुसार शासन व्यवस्था का संचालन करते हुए 'स्व' के मूल्यों को उत्तरोत्तर संवृद्ध करने की परंपरा ही 'स्वराज' कहलाती है।

सभ्यताओ के विकसित व पल्लवित होने का आधार 'स्व' ही होता है, भारत की महान सभ्यता का 'स्व, यथा एकात्ममानववाद, वसुधैव कुटुम्बकम, प्रकृतिसंरक्षण, विश्वकल्याण, प्राणियों में सद्भाव, सर्वे भवन्तु सुखिनः, समस्त विश्व में शांति, समतामूलक समाज संरचना, श्रम की गरिमा, न्यासिता, सहकारिता, सत्य, अहिंसा, अस्तेय, अपरिग्रह जैसे मानवीय नैतिक मूल्य, तेन त्यक्तेन भुंजिथा (त्याग के साथ भोग) जैसे आदर्श हैं।

प्रत्येक राष्ट्र अपने 'स्व' विषयक मूल्यों का पालन करते हुए संचालित होता है, इसी अर्थों में वही 'स्वराज' का उपयोग कर रहे होते हैं। जब किसी सभ्यता या राष्ट्र के 'स्व' विषयक प्राणस्वरुप संस्कृति एवं मूल्यों पर कुठाराघात होता है, तब वास्तव में साभ्यता पराभव की दशा को प्राप्त करती है, ऐसे में शत्रु को पराजित करके उच्च कोटि का पराक्रम कर स्वराष्ट्र को परतंत्रता से और शत्रु से मुक्त करने वाली तथा अपने राष्ट्रीय स्वतंत्रय और स्वराज्य का पुनर्जीवन प्रदान करने वाली स्वतंत्रता संघर्ष की कहानियाँ ही राष्ट्रीय जीवन के स्वर्णिम पृष्ठ के रूप में अंकित होती है।[2] राष्ट्रीय जीवन के पुनर्जीवन में हमारे स्तदैव 'स्व' विषयक मूल्य अर्थात स्वदेशी ही के निहत ही मार्गदर्शक की भूमिका में होते हैं, वास्तव में स्वदेशी ही मूल्य ही स्वराज की सह मार्ग प्रशस्त करते हैं।

महात्मा गाँधी ने स्वदेशी को स्पष्ट करते हुए कहा कि, स्वदेशी का संबंध सिर्फ क्षेत्रीय स्तर पर निर्मित वस्तुओं से नहीं है, बल्कि स्वदेशी यह एक ह्रहद विचार है जो समाज की राजनीति, अर्थव्यवस्था, प्रकृति संस्कृति व मूल्यों का समुच्चय होता है, जिसे समाज अपने अनुभव, विचाश व वैचारिक अधिष्ठान, व क्षेत्रीय आवश्यकताओं के अनुरूप विकसित करता है, इन्हीं जीवन मूल्यों के अनुरूप जीवनयापन करना ही सर्वोच्च स्वराज का उपभोग करना है, अर्थात स्वदेशी ही से ही स्वराज का प्रस्फुटन होता है।

वैश्वीकरणएक ऐसा सिद्धांत है, जो समूचे विश्व को आपस में जोड़ता है, वैश्वीकरण के अंतर्गत समूचे विश्व की अर्थव्यवस्था को आपस में जोड़ा जाता है, जिससे स्वदेशी के सिद्धांत पर नकारात्मक प्रभाव पडता है, वैश्वीकरण सिर्फ आर्थिक व्यवस्था से संबंद्ध संकल्पना नहीं है, बल्कि ये जीवन के सभी पहलुओं को प्रभावित करता है।

वैश्वीकरण ने उदारवादी मूल्यों, व्यक्तिवाद, मानवअधिकार जलवायु एवं समाज संरचना व राजनीतिक व्यवस्था को प्रभावित किया है, जिसने स्वदेशी मूल्यों व परंपराओं का प्रभावित किया है, जिससे विकास में व्यतिक्रम दिखने को मिलता मिला है, परंतु वर्तमान परिस्थितियों में नवीन जीवन मूल्यों व परंपराओं को स्वदेशी जीवन मूल्यों के साथ तादात्म स्थापित करते हुए सही अर्थों में स्वराज की स्थापना की जा सकती है।

किसी भी राष्ट्र या सभ्यता के जीवन मूल्यों पर आक्रान्ताओं या विदेशी ताकतों द्वारा आधिपत्य स्थापित करके उनके जीवन मूल्यों को नष्ट करके अपने नवीन जीवन मूल्यों को स्थापित करने करने का प्रयास किया जाता है, तब सभ्यता पराजित या पराभव के बोध से ग्रसित होती है।

भारत वर्ष के गौरवशाली इतिहास में भी कई बार आक्रांताओं ने हमारे जीवन मूल्यों को विनिष्ट करने का प्रयास किया, परंतु प्रत्येक बार भारतीय वीरो ने पराक्रम के माध्यम से अपने जीवन मूल्यों व 'स्व' को पुनः श्रेष्ठतर स्थिति में स्थापित किया, ऐतिहासिक क्रम में सिकंदर के प्रबल आक्रमण का प्रतिरोध चंद्रगुप्त मौर्य ने करके भारतवर्ष में एकता हिमालय से समुद्रपर्यंत तक एकता स्थापित की।

मौर्योत्तर काल में शक, पहलव व हूण, कुषाणों के आक्रमण का प्रतिरोध समुद्रगुप्त, चंद्रगुप्त विक्रमादित्य॥ जैसे सम्राटों ने उन्हें पराजित करके भारतीय जीवन मूल्यों को स्थापित करने के साथ–साथ वैज्ञानिक व सांस्कृतिक उन्नति को परम वैभव तक पहुँचाया, इस गुप्त काल में अर्थभट्ट, वराहमिहिर ब्रह्गुप्त जैसे महान गणितज्ञ व वैज्ञानिक हुए इस युग में शून्य की खोज, सूर्य केन्द्रीय सिद्धांत, खगोल विज्ञान के कई रहस्यों को सुलझाया गया, गुप्तकाल में सांस्कृतिक क्षेत्र में अभूतपूर्व उन्नति हुयी, जिसमें मूर्तिकला, चित्रकला, शिल्पकला, स्थापत्य कला व साहित्य के क्षेत्र में कालीदास, कामंदक, विशाखादत्त जैसे महान साहित्यकारों को प्रश्रय मिला, परिणामस्वरूप यह युग भारतीय इतिहास में स्वर्णयुग की संज्ञा से विभूषित हुआ ।

कलांतर में मुस्लिमशासकों ने भारतवर्ष पर आधिपत्य करके भारतीय जीवन मूल्यों को छिन्न–भिन्न करने का प्रयास किया, घोर पराभव के दौरान शासकों की धार्मिक हठधर्मिता के बीच शिवाजी, महाराणा प्रताप जैसे वीर योद्धाओं ने अपनी मातृभूमि व जीवन मूल्यों के रक्षार्थ अपार शौर्य व पराक्रम का परिचय देते हुए 'स्वराज' के स्वाभिमान को जागृत रखा।

कालांतर में मुगलों के पतन के परिणामस्वरूप भारत में व्यापारी के वेश में आए यूरोपीय व्यापारिक कंपनियों ने केन्द्रीय सत्ता के कमजोर होने की परिस्थितियों का लाभ उठाकर भारत पर ब्रिटिश कंपनी ने अपना शासन स्थापित कर लिया।

भारतीय इतिहास में ब्रिटिश शासन के खिलाफ भारतीयों ने अपने स्वराज के जीवनमूल्यों की रक्षा के लिए लगभग 100 वर्ष की कठोर तपस्या की, जिसमें स्वतंत्रता प्राप्ति के लिए संघर्ष रूपी यज्ञ में अनेको हुतात्माओं में ने अपने प्राणों का उत्सर्ग किया।

भारत में स्वतंत्रता की प्राप्ति के लिए प्रथम संगठित आंदोलन की शुरुआत स्वदेशी आंदोलन से ही हुई, 7 अगस्त 1905 को कलकत्ता के टाउन हाल में एक ऐतिहासिक बैठक में स्वदेशी आंदोलन की विधिवत घोषणा हुई, जिसमें स्वदेशी वस्तुओं व जीवन मूल्यों को अपनाने का आग्रह किया गया एवं विदेशी वस्तुमों के बहिष्कार को बल दिया गया, यह आंदोलन समूचे भारत में फैल गया, 1906 में भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस के कलकत्ता अधिवेशन में दादाभाई नौरोजी ने अपने अध्यक्षीय भाषण में कहा कि, भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेश उद्देश्य ब्रिटेन या उसके उपनिवेशों की तरह भारत में अपनी सरकार का गठन करना है– अर्थात स्वराज की स्थापना।[3]

स्वदेशी व बहिष्कार आंदोलन को सफल बनाने के लिए भारतीय लोगों को विदेशी वस्तुओं के विकल्प उपलब्ध कराने की चुनौती थी, जिसे भारतीय स्वतंत्रता संग्राम के हुतात्माओं ने स्वीकार करते हुए स्वालंवन के माध्यम से स्वराज को प्राप्त करने का मार्ग प्रशस्त किया।

स्वदेशी आंदोलन ने भारत वासियों के लिए 'आत्मनिर्भरता व आत्मशक्ति' का नारा दिया गया, स्वावलंबन व आत्मनिर्भरता, स्वाभिमान, आदर और आत्मविश्वास की भावना को जागृत करेगा। इसके लिए रविन्द्रनाथ टैगोर ने शांतिनिकेतन की तर्ज पर 'बंगाल नेशनल कालेज' की स्थापना की, अगस्त 1906 में' राष्ट्रीय शिक्षा परिषद' का गठन हुआ जिसने कुछ ही समय में अनेकों राष्ट्रीय विद्यालयों की स्थापना की, जिसका उद्देश्य ''राष्ट्रीय नियंत्रण के तहत जनता को इस तरह की साहित्यिक, वैज्ञानिक व तकनीकी शिक्षा देना, जो राष्ट्रीय जीवनधारा से जुडी हो।' तकनीकी शिक्षा के लिए बंगाल इंस्ट्यूट की स्थापना हुई। आत्मनिर्भरता के लिए स्वदेशी उद्योगों की स्थापना की गई, जिसमें कपडा मिले, साबुन, माचिस के कारखाने, बैंक बीमा कंपनियों अस्तित्व में आई, बंगाल केमिकल्स फैक्ट्री आदि ने स्वालंवन व आत्मनिर्भरता को प्रोत्साहित किया ताकि स्वदेशी के माध्यम से स्वराज की प्राप्ति की जा सके।

स्वदेशी आंदोलन सिर्फ शिक्षा व उद्योगों तक सीमित नहीं रहा इसने सांस्कृतिक पहलुओं पर भी गहरा प्रभाव छोडा, एवं भारतीय जीवन मूल्यों को पुनः स्थापित करने का भागीरथी प्रयास किया गया, यह आंदोलन बंगला साहित्य विशेषकर काव्य के लिए तो स्वर्णकाल था, रविन्द्र नाथ टैगोर, रजनीकांत सेन, हिजेन्द्रलाल राय, मुकंद दास, सैयद अबू मुहम्मद जैसे साहित्यों की काव्य रचना स्वराज की प्राप्ति के लिए प्रेरणास्त्रोत बने, रविन्द्रनाथ टैगोर का गीत 'आमार सोनार बांगला' आज बांग्लादेश का राष्ट्रीय गीत है,।

कला के क्षेत्र में रविन्द्रनाथ टैगोर ने भारतीय कला पर पाश्चात्य आधिपत्य को तोडा एवं भारतीय, राजपूत पारंपरिक कलाओं व अजंता की चित्रकला से प्रेरणा लेकर 1906 में 'इंडियन सोसायटी ऑफ

ऑरिसंटल आर्ट्स (भारतीय प्राच्य संस्था) की स्थापना की विज्ञान के क्षेत्र में जगदीश चंद्र बोस, प्रफुल्ल चंद्रराय जैसे वैज्ञानिकों के अविष्कारों ने स्वदेशी आंदोलन को मजबूती प्रदान करके स्वराज की राह आसान की।

भारतीय स्वतंत्रता संग्राम को गाँधीजी ने तीव्रतर करते हुए नई दशा व दिशा प्रदान की। गाँधीजी ने दक्षिण अफ्रीका में सत्याग्रह का सफल प्रयोग किया करके भारतीयों को राजनैतिक सहूलियतें प्रदान कराने में सफलता अर्जित की। गाँधीजी 1915 में भारत वापस लौटे एवं भारतीय स्वतंत्रता संग्राम के नेतृत्वकर्ताओं ने उन्हें स्वतंत्रता संग्राम का नेतृत्व करने का आग्रह किया । गाँधीजी ने सक्रीय राजनीति में हिस्सा लेने के पूर्व समूचे भारत का भ्रमण किया एवं भारत की सामाजिक, राजनीतिक, आर्थिक आवश्यकताओं को समझा ताकि सिर्फ ब्रिटिश शासन से मुक्ति ही प्राप्त न हो बल्कि भारतवासी सच्चे स्वराज का अनुभव कर सकें। गांधीजी केवल राजनैतिक स्वतंत्रता ही नहीं अपितु जनता की आर्थिक, सामाजिक और आत्मिक उन्नति चाहते थे, राजनैतिक स्वतंत्रता के लिए राष्ट्रीय आंदोलनों का संचालन किया एवं विश्रामकाल में रचनात्मक कार्यक्रमों के संचालन पर बल दिया, जिसमें सांप्रदायिक एकता, अस्पृश्यता निवारण, खादी, ग्रामोद्योग, स्वच्छता, नई तालीम या बुनियादी शिक्षा, वयस्क शिक्षा, महिला कल्याण, स्वास्थ्य और स्वच्छता का ज्ञान राष्ट्रीय भाषा, आर्थिक असमानता के साथ किसान मजदूर, आदिवासी, कुष्ठरोगी, छात्रों के हितों को संरक्षण प्रदान करने के लिए प्राथमिकता दी गई, जिससे 18 सूत्रीय रचनात्मक कार्यक्रमों की रूपरेखा तैयार की गई जिसमें किसानों, मजदूरों, आदिवासियों, महिलाओं

अल्पसंख्यकों के साथ वृहद सामाजिक एवं आर्थिक न्याय को प्रोत्साहित किया गया।

महात्मा गांधी ने स्वराज के लिए स्वदेशी के मापदंडों को स्वीकार किया जो भारतीयों के सभी क्षेत्रो व जीवन मूल्यों से संबंधित थे, गाँधीजी ने स्वदेशी राज्यवस्था के लिए ग्राम स्वराज के आदर्श को स्वीकार किया, गाँधीजी ने प्रचलित संसदीय शासन व्यवस्था की आलोचना करते हुए, 'संसद को बांझ व वेश्या' कहा क्योंकि संसद बिना दबाव के कोई कार्य नहीं करती एवं मंत्रिमंडल की सहमति से ही समस्त कार्य किए जाते है।[5]

संसदीय व केन्द्रीकृत शासन के खिलाक गांधी जी ने एक और आपत्ति दर्ज करते हुए कहा कि यह शासन भी हिंसा का एक रूप है, गाँधीजी का मानना है कि भारत की आत्मा गांवों में बसती है, अर्थात भारत के शासन का संचालन गाँवों के माध्यम से विकेन्द्रीकरण के आधार पर होना चाहिए। मनुष्य जाति का अनुभव इस बात को प्रमाणित करता है कि सामूहिक जीवन उस अवस्था में अधिक विविध, सफल और आनंदपूर्ण होता है, जब उसकी रचना छोटे घटको तथा अधिक सादे संगठनों के आधार पर की जाती है। क्योंकि इन घटकों में जीवन पूर्ण रूप में विकसित और समृद्ध होता आया है. ग्राम स्वराज की यह पद्धति आर्यों की शासन व्यवस्था की बुनियाद थी, गांधीजी ने जिस ग्राम स्वराज की कल्पना की उसमें पुरानी पंचायतों को सिर्फ पुनर्जीवन देने की बात नहीं बल्कि आधुनिक जगत को ध्यान में रखते हुए स्वराज के लिए स्वतंत्र ग्राम घटको की रचना पर बल दिया वयोंकि ये राजनीतिक, आर्थिक तथा सामाजिक क्षेत्रों में अहिंसा को मूर्तरूप प्रदान करता है। आदर्श समाज एक राज्य रहित लोकतंत्र है प्रबुद्ध और जाग्रत अराजकता की अवस्था है, जिसमें सामाजिक जीवन पूर्णता की दशा को प्राप्त होता है, जिस्से वह स्वयंशासित और स्वयं नियंत्रित बन जाता है, क्योंकि सच्चे लोकतंत्र की स्थापना केन्द्र में बैठे हुए बीस व्यक्तियों के द्वारा नहीं हो सकती है, इसके लिए स्थानीय स्तर पर गांव के लोगों द्वारा नीचे से शासन संचालित करना होगा, प्रतिवर्ष पाँच व्यक्तियों की एक पंचायत चुनी जाएगी, इस पंचायत को सब प्रकार की शक्तियों व अधिकार प्राप्त होंगें, पंचायत धारासभा, न्यायसभा और व्यवस्थापिका सभा तीनों का कार्य संयुक्त रूप से करेगी, इससे नागरिक प्रत्येक कार्य के लिए सरकार से अपेक्षाओं की बजाय नागरिकों में उच्च उत्तरदायित्व की भावना का विकास होगा, जो समाज के लिए स्वराज का आदर्श होगा एवं सच्ची राजनीतिक व्यवस्था का अंतिम प्रेरक बल होगा।

गांधीजी ने भारतीय परिस्थितियों को दृष्टिगत रखते हुए अर्थव्यवस्था के स्वदेशी प्रतिमानों को स्वीकार किया, उनके आर्थिक दर्शन में सादगी एवं सरलता, श्रम की प्रतिष्ठा, न्यासधारिता का सिद्धांत, लघु एवं कुटीर उद्योगों की महत्वा एवं सर्वोदय के विचार महत्वपूर्ण हैं। गाँधी जी के अनुसार, ''जो अर्थशास्त्र नैतिक एवं भावनात्मक मूल्यों की उपेक्षा करती है, वह एक मधुमक्खी के छत्ते के समान हैं जिसमे जीवन होते हुए भी एक सजीव जीवन का अभाव रहता है, निष्कर्षत गांधी के आर्थिक दर्शन में वैदिक संस्कृति की पवित्र धारा प्रवाहित है।

गाँधीजी ने आत्मनिर्भरता व स्वदेशी को प्रोत्साहित करने के लिए खादी व चरखा के प्रयोग को बढावा दिया। गाँधीजी का मानना है कि मेरे लिए खादी भारतीय मानव–समाज की एकता, उसकी आर्थिक स्वतंत्रता और समानता का प्रतीक है, इसलिए नेहरू जी ने कहा, ''खादी हिंदुस्तान की साजादी की वर्दी है।'[6] खादी संपूर्ण स्वदेशी मनोवृत्ति का प्रतिनिधित्व करती है, ताकि जीवन की सारी आवश्यक वस्तुएँ भारत में ही ग्रामीणों की मेहनत व बुद्धि से प्राप्त हो सकें ताकि ग्रामीण जनों को एक ओर रोजगार की प्राप्ति हो सके, वहीं दूसरी ओर वे आत्मनिर्भर हो सके, खादी मनोवृति जीवन के आवश्यक पदार्थो के उत्पादन और वितरण का विकेन्द्रीकरण है।

गांधीजी के अनुसार जब हम खादी के उद्योग का पुनरुद्धार कर लेगें, तो और सब उद्योगों का विकास अपने आप हो जाएगा, मैं चरखे को आधार बनाकर सम्यक ग्राम जीवन की रचना करना चाहूंगा, मैं चरखे को केन्द्र बनाकर ऐसी व्यवस्था का निर्माण करूंगा कि उसके चारों ओर दूसरे उद्योग पनपते रहें। चरखा राष्ट्र की खुशहाली और आजादी का प्रतीक बने वह व्यावसायिक युद्ध का नहीं, परंतु व्यावसायिक शांति का प्रतीक है, उसमे संसार के राष्ट्रों के प्रति दुर्भाव का नहीं बल्कि सद्भाव और स्वावलंबन का संदेश है। चरखे का संदेश उसकी परिधि से कहीं ज्यादा व्यापक है, वह सादगी, मानवसेवा, व अहिंसामय जीवन तथा गरीब और अमीर, पूंजी और श्रम, राजा और किसान के बीच है समतामूलक संबंध स्थापित करने का संदेश देता है, जो स्वदेशी के माध्यम से सच्चे अर्थ में स्वराज को प्रोत्साहित करता है।

गांधीजी का मानना है कि हमें आर्थिक पुनर्गठन की आवश्यकता है प्रत्येक व्यक्ति को शारीरिक श्रम करना अनिवार्य किया जाए, लोग खेतों में कार्य करें, जो कृषि कार्य न कर सके उन्हें अपने कौशल में इतनी वृद्धि कर लेनी चाहिए कि ताकि वे कताई, बुनाई, बढईगिरी आदि के कार्य कर सके एवं उनके द्धारा निर्मित वस्तुओं की मांग सिर्फ स्थानीय स्तर पर न हो राष्ट्रीय एवं अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर हो जिससे भारतीय हस्तशिल्प की श्रेष्ठता पुनःस्थापित हो सके।

कुटीर उद्योगों की स्थापना के लिए ग्रामोद्योग केन्द्र स्थापित हो जिनके माध्यम से लोगों को ग्रामोद्योग के लिए प्रशिक्षण उपलब्ध कराया जाए, ग्रामीण स्तर पर पशुपालन के अंतर्गत दुधारू पशुओं के अलावा मुर्गीपालन, मधुमक्खी पालन आदि को प्रोत्साहन मिलना चाहिए।

गाँधी जी का मानना है कि संपूर्ण राजनीतिक सत्ता का स्रोत्र अहिंसक, स्वावलंबी और स्वतंत्रतापूर्ण आर्थिक घटक है, गाँधीजी की कल्पना का स्वराज मानव केन्द्रित है, जबकि पश्चिमी अर्थव्यवस्था धन केन्द्रित, ग्राम स्वराज ऐसी सरल और सादी अर्थव्यवस्था है, जिसका केन्द्र मनुष्य है, जो शोषण रहित एवं विकेन्द्रित व्यवस्था को प्राथमिकता देती है।

महात्मा गाँधी न सिर्फ राजनीतिक स्वराज के पक्षधर थे, उनका मानना था कि व्यक्ति के समस्त जीवन मूल्यों को प्रभावित करने वाले कारक यथा आर्थिक, सामाजिक धार्मिक तत्वों की, स्वदेशी मूल्यों पर पुर्नरचना की जानी चाहिए, गांधीजी स्वराज के लिए समतामूलक समाज के निर्माण को प्राथमिकता देते थे, जिसमें अस्पृस्यता निवारण धार्मिक सद्भाव, स्त्रियों के साथ समान व्यवहार व उनका कल्याण निहित था।

गांधीजी का मानना था कि अस्पृस्यता भारत में व्याप्त में सबसे घातक कुरीति है, इसका उन्मूलन अनिवार्य एवं यथाशीघ्र होना चाहिए कोई भी जन्म से अछूत नहीं हो सकता, क्योंकि सभी उसी आग की चिनगारियॉ है, ऐसे में कुछ को अस्पृश्य मानना पाप है। अस्पृश्यता निवारण का व्रत केवल अछूतों से मित्रता करके ही पूरा नहीं हो जाता, इसमें सभी प्राणियों को आत्मवत् प्रेम करने का समावेश होना चाहिए अस्पृश्यता निवारण का अर्थ सारे–संसार के लिए प्रेम और उसकी सेवा है एवं भेदभाव के समस्त बंधनों को नष्ट करने की आवश्यता है। गांधीजी हरिजन में लिखते है यदि विश्व में जो कुछ है वह सब ईश्वर से व्याप्त है अर्थात ब्राह्मण, भंगी पंडित मेहतर सबमें भगवान विद्यमान है, न तो कोई

ऊंचा है न ही कोई नीचा, सभी सर्वथा समान है, समान इसलिए सब उसी सृष्टि की संतान है।
भारतीय वैदिक परंपरा नारियों के सम्मान व कल्याण के प्रति जागरुक रही है, और वेद यह उद्घोष करते आए हैं कि–

यत्र नार्यस्तु पूज्यन्ते रमन्ते तत्र देवताः ।
यत्रैतास्तु न पूज्यन्ते सर्वास्तत्राफलाः क्रियाः ॥

अर्थात जहाँ स्त्रियों की पूजा होती है वहाँ देवता निवास करते हैं, एवं जहाँ स्त्रियों की पूजा नहीं होती है उनका सम्मान नहीं होता है वहाँ किये गये समस्त अच्छे कर्म निष्फल हो जाते हैं।
भारतीय परंपरा के इस स्वदेशी भाव को गाँधीजी ने आत्मसात किया, एवं भारतीय स्वतंत्रता अर्थात स्वराज्य की प्राप्ति जैसे पवित्र कार्य की सिद्धि के लिए महिलाओं की स्वतंत्रता संग्राम में भूमिका सुनिश्चित करने के साथ समाज में उनके सम्मान को बढ़ाने के लिए उनकी शिक्षा, सार्वजनिक कार्यों में भागीदारी इत्यादि को वरीयता दी।
गाँधीजी के नेतृत्व का ही प्रभाव था की स्त्रियों में इतना आत्मविश्वास जागृत हुआ कि उन्होंने राष्ट्रीय आंदोलन में अपनी सक्रीय भूमिका का निवर्हन किया, जिसमें स्वदेशी व बहिष्कार आंदोलन को सफल बनाने के लिए खादी की साडियों का प्रयोग, सूत कातना, शराब दुकानों पर धरना, नमक सत्याग्रह में महत्वपूर्ण भूमिका निर्वहन करके स्वयं को पुरुषों के समकक्ष ला दिया।
भारत की भूमि ऐसी भूमि है जिस पर दुनिया में विद्यमान सभी धर्मों के धर्मावलंवी अपने धर्म का स्वतंत्रता पूर्वक निर्वहन करते हैं, जिसका प्रमुख कारण भारत की ''वसुधैव कुटुम्बकम '' की भावना जो समस्त दुनिया के लोगों को अपना कुटुम्ब मानती है।
इसी भाव को दृष्टिगत रखते हुए गांधी हिन्द स्वराज में लिखते हैं, ''दुनिया के विभिन्न धर्म एक ही स्थान पर पहुंचने के अलग–अलग रास्ते हैं, जहाँ तक हम एक ही उद्ष्टि स्थान पर पहुंचते हैं, हमारे भिन्न–भिन्न मार्ग अपनाने में क्या हर्ज है? वास्तव में जितने व्यक्ति हैं उतने ही धर्म हैं।''
इसी भाव की अभिव्यक्ति कबीरदास जी अपने इस दोहे से करते हैं –

जल में कुम्भ–कुम्भ में जल है बाहर भीतर पानी।
फूटा कुंभ जल जलहि समाना यह तथ कहौ गयानी ।।

इस तरह अद्धैत वेदांती स्वामी विवेकानंद कहते है कि मानवता का उद्देश्य ईश्वर से एकाकार करना है, जिस प्रकार प्रत्येक नदी का उद्देश्य समुद्र में मिलना होता है चाहे उसके रास्ते भिन्न–भिन्न हो सकते है, उसी प्रकार धर्मों के आचरण का तरीका भिन्न हो सकता है परंतु अंतिम उद्देश्य ईश्वर में विलीन होकर मोक्ष की प्राप्ति करना ही है।
भारतीय स्वराज की प्राप्ति एवं समाजिक सद्भाव के लिए सभी धर्मो में आदर की भावना होना अनिवार्य है, इसी भाव से प्रेरित होकर भारत को स्वतंत्रता संग्राम में सभी धर्मों की भूमिका महत्वपूर्ण रही है।
स्वराज का अर्थ सिर्फ राजनीतिक सत्ता के सूत्र अपने हाथों में होने से नहीं है, स्वराज का वास्तविक अर्थ होता है कि प्रत्येक व्यक्ति अपने नैतिक मूल्यों एवं अंर्तात्मा की आवाज के द्वारा शासित होना है. भारतीय परंपरा में अंर्तात्मा को विकसित होने में कुछ नैतिक मूल्य मार्गदर्शक की भूमिका में होते हैं यथा सत्य, अहिंसा, सत्याग्रह, ब्रहाचर्य, अस्तेय, अपरिग्रह, सहिष्णुता, न्यासिता, आत्मत्याग, स्वच्छता ।
भारतीय परंपरा में इस बात को स्वीकार किया जाता था कि ईश्वर ही सत्य हैं, परंतु गाँधीजी ने उक्ति को परिवर्तित करते हुए कहा कि सत्य ही ईश्वर है क्योंकि पहली उक्ति नास्तिक व्यक्ति सत्य के अनुभव से बंचित हो सकते हैं। अतएव सत्य ही ईश्वर के समान है, उसका मानना है कि हमारी सारी प्रवृतियों का केन्द्र सत्य होना चाहिए सत्य हमारे जीवन का प्राण होना चाहिए क्योंकि सत्य के बिना जीवन में किसी भी सिद्धांत या नियम का पालन असंभव है।
अहिंसा की व्याख्या किसी प्राणी को चोट न पहुँचाना के रूप में सीमित अर्थो मे व्याख्या होगी अहिंसा का तात्पर्य किसी भी प्राणी को मन, वचन या कर्म से नुकसान न पहुंचाना है, गांधीजी ने अहिंसा की अवधारणा जैन व बौद्ध धर्म के साथ ईसाई धर्म से भी प्रेरित थी जो समस्त जीवों के प्रति प्रेम को बढावा देने के लिए प्रतिबद्ध है।
गांधीजी का मानना है कि अहिंसा के बिना सत्य की खोज और प्राप्ति असंभव है, अहिंसा और सत्य आपस में इतने ओतप्रोत है कि उन्हे एक दूसरे से अलग करना लगभग असंभव है, वे एक ही सिक्के के दो पहलू है।[7]
जब अहिंसा को हम जीवन सिद्धांत के रूप में मान लेते हैं, तो वह हमारे सारे जीवन में व्याप्त हो जानी चाहिए, केवल विशेष मौकों पर ही उसका उपयोग नहीं होना चाहिए, यह मानना गहरी भूल है कि अहिंसा केवल व्यक्तियों के लिए अच्छी है, और जनसमूह के लिए नहीं।
गाँधीजी के अनुसार हमें जागृत अहिंसा का पालन करना चाहिए ताकि समाज का निर्माण वास्तविक अहिंसा के सिद्धांत के अनुरूप है।
गाँधीजी के अनुसार ब्रह्चर्य सब इन्द्रियों पर संपूर्ण नियंत्रण स्थापित करता, ताकि इसके माध्यम से ईश्वर के साथ संपूर्ण संपर्क स्थापित किया जा सके, यही मानव का सबसे परम लक्ष्य है।
गांधीजी का मानना है कि व्यक्ति अस्तेय के सिद्धांत का पालन किए बगैर व्यक्ति का सर्वांगीण विकास नहीं हो सकता है, अस्तेय का सामान्य तात्पर्य ''चोरी न करता है, गाँधीजी के अनुसार आवश्यकता से अधिक वस्तुओं का उपयोग भले ही इजाजत से किया जाए तब भी वह अस्तेय की श्रेणी में ही आता है, अस्तेय व अपरिग्रह के बीच गहरा संबंध है, अपरिग्रह के सिद्धांत का पालन करने वाला व्यक्ति धीरे– धीरे अपनी आवश्यकताओ को कम कर देगा एवं संसाधनों पर दवाव कम होगा जिसने दरिद्रता का समाधान बेहतर तरीके से हो सकता है।
गांधीजी के अनुसार अस्तेय व अपरिग्रह व्रत को धारण करने वाले व्यक्ति नम्र, विचारशील, जागरुक व सरल होते हैं।
सत्याग्रह का शाब्दिक अर्थ सत्य के लिए आग्रह' है, सत्याग्रह में विरोधी को हानि पहुंचाने की जरा भी कल्पना नहीं है, सत्याग्रह का नियम यह है कि स्तयं कष्ट उठाकर विरोधी पर विजय प्राप्त की जाए।[9] सत्याग्रह के द्वारा क्रोध या द्वेषरहित कष्ट सहन के सूर्योदय के सामने कठोर से कठोर हृदय और घोर से घोर अज्ञान भी विलीन हो जाएगा।

सक्रीय अहिंसा का अर्थ ज्ञानपूर्वक कष्ट सहन है इसका मतलब यह नहीं कि दुराचारी की मर्जी के सामने चुपचुप गर्दन झुका दी जाए, परंतु इसका मतलब है कि अत्याचारी की मर्जी के विरुद्ध अपनी आत्मा की सारी शक्ति को लगा दिया जाए, जीवन के इस धर्म का आचरण करते हुए एक अकेले त्यक्ति के लिए भी यह सभंव है कि वह अपने सम्मान अपने धर्म और अपनी आत्मा की रक्षा के लिए एक अन्यायी साम्राज्य की सारी ताकत का मुकाबला करे और उस साम्राज्य के पतन या पुनरुद्धार की बुनियाद डाले, इसी सत्याग्रह के औजार से गांधीजी ने दक्षिण अफ्रीका में विजय पताका फहराई एवं उसके बाद भारत के स्वतंत्रता संग्राम के नेतृत्व के दौरान ब्रिटिश औपनिवेशिक सत्ता से आजादी के लिए सत्याग्रह का सहारा लिया जिसके माध्यम से भारत ने स्वराज की प्राप्ति की

स्वदेशी व वैश्वीकरण वैचारिक अधिष्ठान एक–दूसरे के विपरीत है, स्वदेशी जहाँ घरेलू मूल्यों, वस्तुओं व सिद्धांतों के अनुरूप जीवन को बढ़ावा देती हैं, बल्कि वैश्वीकरण मुख्यतः एकीकरण एवं अंतःक्रिया की प्रक्रिया है, जिसमें आर्थिक, राजनीतिक, सामाजिक, सांस्कृतिक पहलू सम्मिलित हैं। वैश्वीकरण मुख्यतः आर्थिक गतिविधियों से संवद्ध है जिसमें समुचे विश्व के संसाधनों, वस्तुओं व सेवाओ की पहुंच विश्व के सभी कोने हिस्सो तक सुनिश्चित करना, इसके साथ ही वैश्वीकरण ने सिर्फ आर्थिक संसाधनों का ही नहीं बल्कि सामाजिक, राजनीतिक, सांस्कृतिक मूल्यों का विस्तार किया।

वैशीकरण के परिणामस्वरूप बाजार का एकीकरण होने से तृतीय विश्व के देशों के सामने भी तीव्र आर्थिक विकास की संभावना को बल मिला है, परंतु विकसित देशों की पूँजी, तकनीक ने तृतीय विश्व के देशों के बाजार व कच्चे माल पर आधिपत्य स्थापित किया जिससे वैश्वीकरण के कारण विकासशील व अविकसित राष्ट्रों के विकास की संभावना सीमित हो जाती है।

वैश्वीकरण की बाजार व्यवस्था उदारवादी सिद्धांतों पर आधारित है, उदारवादी सिद्धांतों ने व्यक्तिवाद को बढ़ावा दिया जिसमें निरपेक्ष स्वतंत्रता को बढ़ावा दिया है, भारतीय समाज में उदारवाद के कारण संयुक्त परिवार के स्थान पर एकल परिवारों को वरीयता मिल रही है एवं परिवार पर स्थापित युक्तियुक्त नियंत्रण की परंपरा विलुप्त रही है, जिससे समाज उच्छृंखल हो रहा है।

वैश्वीकरण ने महिलाओं को उत्पाद के रूप में प्रदर्शित किया है, स्थानीय कला, शिल्प व संस्कृति को नकारात्मक रूप से प्रभावित किया है, वैश्वीकरण के कारण महामारी व रोगों के प्रसार में भी तीव्रता देखी गई है, कोरोना महामारी इसका ज्वलंत उदाहरण है। वैश्वीकरण ने संमप्रभुता के सिद्धांत को कमजोर किया है, आज लोकतंत्र की स्थापना, निःशस्त्रीकरण, मानवअधिकार जैसे मुद्दों ने सरकारों की स्वायत्ता को भी प्रभावित किया है, वैश्वीकरण ने अत्यधिक विकास व औगीकरण को बढ़ावा दिया जिससे एक ओर लघु एवं कुटीर उद्योग का विनाश हुआ जिससे बेरोजगारी में वृद्धि हुई वहीं दूसरी ओर अत्यधिक औद्योगीकरण ने प्राकृतिक संसाधनों के दोहन में वृद्धि करके जलवायु परिवर्तन जैसे वैश्विक विभीषिका के सामने विश्व को लाकर खड़ा कर दिया।

भारत की परंपरा कभी भी 'कूपमंडूकता की नहीं रही, भारत ने विश्व में प्रचलित विचारों से साम्यता रखी एवं समसामयिक परिस्थितियों से भली–भाँति साक्षात्कार करता रहा है, परंतु इस सभी के बीच अपनी चिरंतन स्वदेशी व सनातनी परंपरा को केन्द्र में रखकर ही विकास के आयामों को स्वीकार किया है।

पंडित दीनदयाल उपाध्याय का मानना है कि भारत को अपने 'स्व' को केन्द्र में रखकर जीवन मूल्यों का निर्माण करना चाहिए एवं उन्हीं जीवन मूल्यों को आत्मसात करके समस्त विश्व का मार्गदर्शन करना चाहिए ।

निष्कर्ष

यह कहा जा सकता है हमें आज भी अपने स्व' विषयक जीवनमूल्यों व संस्कृति को बढ़ावा देते हुए उसे आत्मसात करना चाहिए, क्योंकि यही स्वदेशी विषयक सिद्धांत ही वास्तविक स्वशासन को प्रेरित करेंगे।

संदर्भ ग्रंथ सूची

1. डॉ. मिश्रा जयकुमार (2012), ''गाँधीजी की स्वराज संबंधी अवधारणा'' 21वीं सदी में महात्मा गांधी की प्रासंगिकता, प्रत्यूष पब्लिकेशन गाजियाबाद । पृ.सं. 201
2. विनायक दामोदर सावरकर (2021), ''छह स्वर्णिम पृष्ठ '' प्रभात पेपरबैक्स, नई दिल्ली पृ.सं. VII
3. विपिनचंह (2011). ''भारत का स्वतंत्रता संघर्ष'' हिन्दी माध्यम कार्यान्वय निदेशालय दिल्ली विश्वविद्यालय, नईदिल्ली पृ.सं. 106
4. https://www.gandhismriti.gov.in
5. महात्मा गांधी (2020), 'हिन्द स्वराज, शिरीष प्रिंटर्स, नई दिल्ली पृ.सं. 15
6. महात्मा गांधी (1955), ''सर्वोदय'', नवजीवन प्रकाशन अहमदाबाद
7. महात्मा गांधी मंगल प्रभात 1945 पृं.सं. 7
8. महात्मा गांधी, हरिजन, 5/01/1936
9. साबरमती 13–15 जनवरी 1928 को साबरमती अंतर्राष्ट्रीय फेलोशिप संघ सम्मेलन की रिर्पोट पृ.सं. (18)